ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 2, Issue 12, December 2013

ऋग्वेद में अध्यात्म की अवधारण

वर्षा जोशी

रिसर्च स्कॉलर, महर्षि दयानंद सरस्वती विश्वविद्यालय , अजमेर

सारांश

ऋग्वेद में कुल दस मण्डल हैं जिनमें १०२८ सूक्त हैं और कुल १०,५८० ऋचाएँ हैं। इन मण्डलों में कुछ मण्डल छोटे हैं और कुछ बड़े हैं।

ऋग्वेद विश्व का सबसे प्राचीन ग्रंथ है जो वर्तमान समय में उपलब्ध है।

ऋग्वेद के कई सूक्तों में विभिन्न वैदिक देवताओं की स्तुति करने वाले मंत्र हैं। यद्यपि ऋग्वेद में अन्य प्रकार के सूक्त भी हैं, परन्तु देवताओं की स्तुति करने वाले स्तोत्रों की प्रधानता है।

ऋग्वेद में ३३ देवी-देवताओं का उल्लेख है। इस वेद में सूर्या, उषा तथा अदिति जैसी देवियों का वर्णन किया है। इसमें अग्नि को आशीर्षा, अपाद, घृतमुख, घृत पृष्ठ, घृत-लोम, अर्चिलोम तथा वभ्रलोम कहा गया है। इसमें इन्द्र को सर्वमान्य तथा सबसे अधिक शक्तिशाली देवता माना गया है। इन्द्र की स्तुति में ऋग्वेद में २५० ऋचाएँ हैं। ऋग्वेद के एक मण्डल में केवल एक ही देवता की स्तुति में श्लोक हैं, वह सोम देवता है।

इस वेद में बहुदेववाद, एकेश्वरवाद, एकात्मवाद का उल्लेख है।

ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में निर्गुण ब्रह्म का वर्णन है।

इस वेद में आर्यों के निवास स्थल के लिए सर्वत्र 'सप्त सिन्धवः' शब्द का प्रयोग हुआ है।

इस में कुछ अनार्यों जैसे - पिसाकास, सीमियां आदि के नामों का उल्लेख हुआ है। इसमें अनार्यों के लिए 'अव्रत' (व्रतों का पालन न करने वाला), 'मृद्धवाच' (अस्पष्ट वाणी बोलने वाला), 'अनास' (चपटी नाक वाले) कहा गया है।

इस वेद लगभग २५ नदियों का उल्लेख किया गया है जिनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण नदी सिन्धु का वर्णन अधिक है।सर्वाधिक पवित्र नदी सरस्वती को माना गया है तथा सरस्वती का उल्लेख भी कई बार हुआ है। इसमें गंगा का प्रयोग एक बार तथा यमुना का प्रयोग तीन बार हुआ है।

ऋग्वेद में राजा का पद वंशानुगत होता था। ऋग्वेद में सूत, रथकार तथा कर्मार नामों का उल्लेख हुआ है, जो राज्याभिषेक के समय पर उपस्थित रहते थे। इन सभी की संख्या राजा को मिलाकर १२ थी।

ऋग्वेद में 'वाय' शब्द का प्रयोग जुलाहा तथा 'ततर' शब्द का प्रयोग करघा के अर्थ में हुआ है।

ऋग्वेद के ९वें मण्डल में सोम रस की प्रशंसा की गई है।

ऋग्वेद के १०वे मंडल मे पुरुषसुक्त का वर्णन है।

"असतो मा सद्गमय" वाक्य ऋग्वेद से लिया गया है। सूर्य (सवितृ को सम्बोधित "गायत्री मंत्र" ऋग्वेद में उल्लेखित है।

इस वेद में गाय के लिए 'अहन्या' शब्द का प्रयोग किया गया है।

ऋग्वेद में ऐसी कन्याओं के उदाहरण मिलते हैं जो दीर्घकाल तक या आजीवन अविवाहित रहती थीं। इन कन्याओं को 'अमाजू' कहा जाता था।

इस वेद में हिरण्यपिण्ड का वर्णन किया गया है। इस वेद में 'तक्षन्' अथवा 'त्वष्ट्रा' का वर्णन किया गया है। आश्विन का वर्णन भी ऋग्वेद में कई बार हुआ है। आश्विन को नासत्य (अश्विनी कुमार) भी कहा गया है।

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 2, Issue 12, December 2013

इस वेद के ७वें मण्डल में सुदास तथा दस राजाओं के मध्य हुए युद्ध का वर्णन किया गया है, जो कि पुरुष्णी (रावी) नदी के तट पर लड़ा गया। इस युद्ध में सुदास की जीत हुई ।
ऋग्वेद में कई ग्रामों के समूह को 'विश' कहा गया है और अनेक विशों के समूह को 'जन'। ऋग्वेद में 'जन' का उल्लेख २७५ बार तथा 'विश' का १७० बार किया गया है। एक बड़े प्रशासनिक क्षेत्र के रूप में 'जनपद' का उल्लेख ऋग्वेद में केवल एक बार हुआ है। जनों के प्रधान को 'राजन्' या राजा कहा जाता था। आर्यों के पाँच कबीले होने के कारण उन्हें ऋग्वेद में 'पञ्चजनाः' कहा गया – ये थे- पुरु, यदु, अनु, तुर्वशु तथा द्रहयु।
'विदथ' सबसे प्राचीन संस्था थी। इसका ऋग्वेद में १२२ बार उल्लेख आया है। 'समिति' का ९ बार तथा 'सभा' का ८ बार उल्लेख आया है।
ऋग्वेद में कृषि का उल्लेख २४ बार हुआ है।
ऋग्वेद में में कपड़े के लिए वस्त्र, वास तथा वसन शब्दों का उल्लेख किया गया है। इस वेद में 'भिषक्' को देवताओं का चिकित्सक कहा गया है।
इस वेद में केवल हिमालय पर्वत तथा इसकी एक चोटी मुञ्जवन्त का उल्लेख हुआ है।

परिचय

भारतीय अध्यात्म दर्शनकी स्व-उत्पत्ति नहीं हुई अपितु यह वैदिक शास्त्रों पर आधारित है और विभिन्न चरणों के माध्यम से प्रकट हुआ है।

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 2, Issue 12, December 2013

इसके प्राथमिक ग्रंथ -वेद, मूल शब्द 'विद्' से बने हैं जिसका अर्थ है ज्ञान, और भारतीय अध्यात्म दर्शन के अनुसार ये समय के प्रारंभ से ही अलिखित, शाश्वत और परिपूर्ण रूप में उपलब्ध हैं। यद्यपि वेदों में भी विभिन्न प्रकार के साहित्य हैं, जैसे ऋग्वेद में मुख्य रूप से भौतिक और आध्यात्मिक ज्ञान है,यजुर्वेद में कर्म, कर्तव्यों और जिम्मेदारी का वर्णन है,साम वेद में ललित कला सम्बंधित प्रार्थना और टिप्पणी शामिल है, और अथर्ववेद में अंकगणित, भूविज्ञान, जीवन विज्ञान, भौतिक विज्ञान और चिकित्सा विज्ञान शामिल हैं। पूर्व के अध्ययन संभवत: अनुवादों और व्याख्याओं में अर्थ बदलने के कारण वैदिक साहित्य में अंतर्निहित अवधारणा को समझने में असफल रहा हैं। स्पष्ट है कि वे मुख्य रूप से भौतिकशास्त्री वेबर के कार्य से प्रेरित हैं, और मूलत: शास्त्रों से पूर्व में दो बार अनुवाद करने के कारण उसका मूल अर्थ विकृत हो गया है । उदाहरण के लिए,फ्रांसिस बेनियन का तर्क है कि 'वेद उनमें लिखित किसी भी जानकारी का कोई विचार व्यक्त नहीं करते ... वास्तव में इनमें मनुष्य या ईश्वर से संबंधित कुछ भी नहीं है। यह विशेष रूप से धर्म (अनुष्ठान कर्तव्यों) की निंदा करते हैं' (1992-51)।[1,2]

वास्तव में कई स्त्रोत्रों में से एक निम्नलिखित, मनुष्य की ईश्वर से प्रार्थना का वर्णन है:
'विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आसुव।।Ó(यजुर्वेद: 30/3)
अर्थात: हे सकल जगत के निर्माता, समग्र ऐश्वर्य के मालिक, सुखों और सौभाग्य के दाता और ज्ञान के प्रकाशक हमारे सम्पूर्ण दुर्गुणों, दुव्यसनों और दु:खों के कारणों को दूर कीजिए, और जो कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और सुख हैं, वे हमें प्राप्त कराइए।

इसके अतिरिक्त, राजा/समुदाय/संगठन के प्रमुख या अग्रणी के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को इस प्रकार वर्णित करता है:
'नमो विन्याय च कक्ष्याय च नम: श्रव्याय च प्रति श्रव्याय च नम:।
आशुषेनाय चशुर्थाय च नम: शूरायचवभेदिने च।।Ó (यजुर्वेद: 16/34)

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 2, Issue 12, December 2013

एक राजा अथवा प्रमुख या अग्रणी को विशेष रूप से शिक्षकों, विद्वानों, सेना के अधिकारियों और राजनयिकों पर अधिक धन, सुविधा और लाभ देना चाहिए, ताकि उन्हें बेहतर प्रदर्शन के लिए प्रेरित किया जा सके।

यहां स्पष्ट है कि शास्त्र और वेद स्पष्ट रूप से न केवल विभिन्न पदों पर आसीन लोगों के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों की जानकारी देते हैं बल्कि सर्वशक्तिमान के समक्ष आत्मसमर्पण कर उनके आशीर्वाद के लिए प्रार्थना भी करते हैं। इसी प्रकार,वर्ण व्यवस्था की उत्पत्ति को समझने में भी बेनियन से चूक हुई है। जैसे 'व्रतं इति कर्मणां व्रणोति इति सत: वर्णो व्रणोत:' (निरुक्त: 2/3) (गुण और कर्म एक व्यक्ति का वर्ण निर्धारित करते हैं),'चतुर्वर्ण मया सृष्टं गुण कर्म विभागश:' (गीता: 4/13) (गुण और कर्म चार वर्णों का निर्धारण करते हैं), और 'आचार्य तवस्य यम जाति मुतपादयति सावित्रय:' (मनुस्मृति: 2/148) (गुणों, शिक्षा और कार्यों के आधार पर, शिक्षक स्नातक के दौरान छात्रों का वर्ण निर्धारित करता है) जैसे उदाहरण स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं कि दर्शन शास्त्रों द्वारा निर्धारित वर्ण व्यवस्था व्यक्ति के गुणों पर आधारित थी, न कि एक ही वर्ण (जिसे अभी विकृत स्वरुप में जाति बोला जाता है) के किसी व्यक्ति से जन्म लेने से तय होती थी।[3]

विचार – विमर्श

य आध्राय चकमानाय पित्वोऽन्नवान्सन्रफितायोपजग्मुषे । स्थिरं मनः कृणुते सेवते पुरोतो चित्स मर्डितारं न विन्दते ॥

(य आध्राय चकमानाय पित्वः अन्नवान् सन् रफिताय उपजग्मुषे स्थिरं मनः कृणुते सेवते पुरा उतो चित् सः मर्डितारं न विन्दते ।)

जो व्यक्ति अन्नवान् होते हुए निर्धनता से दुर्बल हुए पास आए याचक को अन्नदान नहीं करता, बल्कि मन कठोर रखते हुए उसके समक्ष अन्न का उपभोग अकेले करता है वह स्वयं भी कहीं सुख नहीं पा सकता ।

मेरे मतानुसार इस मंत्र में अन्न का अर्थ जीवनाधार अन्न-संपदाएं यानी भोग्य वस्तुएं होना चाहिए । संपन्न व्यक्ति के मन में भूखे-प्यासे के प्रति कुछ करुणा भाव तो जगना ही चाहिए । 'कहीं सुख नहीं पा सकता' के अर्थ पारलौकिक सुख से तो नहीं है ? वैदिक चिंतक इहलोक-परलोक के सतत चलने वाले चक्र में विश्वास करते थे, और मानते थे कि इहलोक के कर्मों पर परलोक निर्भर करता है ।

न स सखा यो न ददाति सख्ये सचाभुवे सचमानाय पित्वः । अपास्मात्प्रेयान्न तदोको अस्ति पृणन्तमन्यमरणं चिदिच्छेत् ॥

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 2, Issue 12, December 2013

(न स सखा यः न ददाति सख्ये सचाभुवे सचमानाय पित्वः अप अस्मात् प्रेयात् न तत् ओको अस्ति पृणन्तम् अन्यं अरणं चित् इच्छेत् ।) [4]

जो व्यक्ति अपने साथ रहने वाले सहायक सहचर सखा को अन्नादि नहीं देता वह सुहृद् कहलाने के योग्य नहीं है । इस व्यक्ति का घर अपने योग्य नहीं है इस विचार के साथ सखा को उस व्यक्ति साथ छोड़कर अन्नादि की याचना करते हुए अन्यत्र अपना आश्रय तलाशना चाहिए ।

सखा और मित्र शब्दों में भेद है । मोटे तौर पर दोनों समानार्थी मान लिए जाते हैं । मित्र व्यक्ति सदैव पास रहता हो आवश्यक नहीं; यह भावनात्मक अधिक है । इसके विपरीत सखा साथ में रहकर सहचर/परिचर की भूमिका में रहता है; अर्थात् साथ में रहने वाला सखा होता है ।

पृणीयादिन्नाधमानाय तव्यान्द्राघीयांसमनु पश्येत पन्थाम् । ओ हि वर्तन्ते रथ्येव चक्रान्यमन्यमुपतिष्ठन्त रायः ॥

(पृणीयात् इत् न अधमानाय तव्यान् द्राघीयांसम् अनुपश्येत पन्थाम् ओ हि वर्तन्ते रथ्या इव चक्रा अन्यम् अन्यम् उपतिष्ठन्त रायः ।)

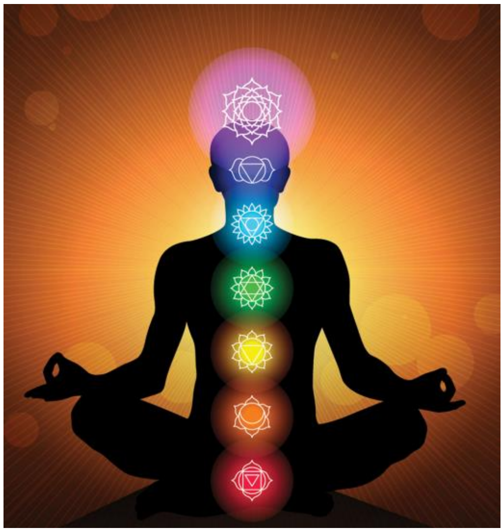

धनसंपदाओं से सुसमृद्ध व्यक्ति को चाहिए कि वह याचक की मांग को पूरी करते हुए पुण्यमार्ग का अनुसरण करे । संपदाओं का क्या है, वे तो कहीं भी सदैव के लिए नहीं टिकतीं । जैसे रथ के पहिए के अर (आरा) एक-दूसरे का स्थान लेती हुई अपना स्थान बदलती हैं वैसे ही संपदा भी अपना स्थान बदलती रहती हैं ।

यह मंत्र मनुष्य को धनसंपदा की नश्वरता का ध्यान दिलाती है । मंत्र कहता है कि कल तुम भी निर्धन हो सकते हो या कालांतर में तुम्हारी संपदा का नाश हो सकता है । निश्चय की धन की अनश्वरता संदेहास्पद है । यदि आप इतिहास पर दृष्टि डालें तो पाएंगे कि आज के सुसंपन्न लोगों की पूर्ववर्ती चौथी-पांचवीं पीढ़ियां सामान्य ही रही हैं, और जो लोग तीन-चार पीढ़ी पहले तक संपन्न रहे हैं उनके वंशजों की सुसंपन्नता की बातें नहीं होती हैं । असल में धन की तीन नियतियों का उल्लेख नीतिशास्त्रों में मिलता हैः भोग, दान एवं नाश । मनुष्य एक सीमा से अधिक भोग कर ही नहीं सकता है । ऐसे में उसे धन का एक अंश दान में खर्च करना ही चाहिए ।

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 2, Issue 12, December 2013

यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो उस धन का अन्य तरीके से नाश ही अंतिम परिणति रह जाती है । अयोग्य उत्तराधिकारियों के हाथ में पहुंचकर उस धन की बरबादी अवश्यंभावी है ।

यह दुर्भाग्य की बात है कि स्वयं को धर्मनिष्ठ कहने वाले भारतीय समाज के लोगों के मन में जरूरतमंदों की आर्थिक मदद का विचार आता ही नहीं है । सीमित भोग के पश्चात् अपने धन को वे 'और अधिक धन' बटोरने में निवेश करते हैं । धन बढ़ता जाता है, लेकिन निरंतर बढ़ते हुए उस धन का उपभोग होगा कैसे यह प्रश्न उनके लिए महत्त्व नहीं रखता है । [5]

मानव जीवन का सबसे प्राचीन दर्शन (philosophy of life) कदाचित् चार्वाक दर्शन है, जिसे लोकायत या लोकायतिक दर्शन भी कहते हैं । लोकायत का शाब्दिक अर्थ है 'जो मत लोगों के बीच व्याप्त है, जो विचार जनसामान्य में प्रचलित है ।' इस जीवन-दर्शन का सार निम्नलिखित कथनों में निहित है:

यावज्जीवेत्सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत् ।

भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः ।।

त्रयोवेदस्य कर्तारौ भण्डधूर्तनिशाचराः ।

(स्रोत: ज्ञानगंगोत्री, संकलन एवं संपादन: लीलाधर शर्मा पांडेय, ओरियंट पेपर मिल्स, अमलाई, म.प्र., पृष्ठ 138)

मनुष्य जब तक जीवित रहे तब तक सुखपूर्वक जिये । ऋण करके भी घी पिये । अर्थात् सुख-भोग के लिए जो भी उपाय करने पड़ें उन्हें करे । दूसरों से भी उधार लेकर भौतिक सुख-साधन जुटाने में हिचके नहीं । परलोक, पुनर्जन्म और आत्मा-परमात्मा जैसी बातों की परवाह न करे । भला जो शरीर मृत्यु पश्चात् भष्मीभूत हो जाए, यानी जो देह दाहसंस्कार में राख हो चुके, उसके पुनर्जन्म का सवाल ही कहां उठता है । जो भी है इस शरीर की सलामती तक ही है और उसके बाद कुछ भी नहीं बचता इस तथ्य को समझकर सुखभोग करे, उधार लेकर ही सही । तीनों वेदों के रचयिता धूर्त प्रवृत्ति के मसखरे निशाचर रहे हैं, जिन्होंने लोगों को मूर्ख बनाने के लिए आत्मा-परमात्मा, स्वर्ग-नर्क, पाप-पुण्य जैसी बातों का भ्रम फैलाया है ।

चार्वाक सिद्धांत का कोई ग्रंथ नहीं है, किंतु उसका जिक्र अन्य विविध दर्शनों के प्रतिपादन में मनीषियों ने किया है । उपरिलिखित कथन का मूल स्रोत क्या है इसकी जानकारी अभी मुझे नहीं हैं । मुझे यह 'ज्ञानगंगोत्री' नामक ग्रंथ में पढ़ने को मिला ।

माना जाता है कि 'लोकायत' विचार का कोई प्रणेता नहीं है, लेकिन इसे दर्शन रूप में स्थापित करने का श्रेय आचार्य बृहस्पति को दिया जाता है, जो कदाचित् देवगुरु बृहस्पति से भिन्न थे । चार्वाक को उनका शिष्य बताया जाता है, जिसने इस विशुद्ध भौतिकवादी विचारधारा को प्रचारित-प्रसारित किया । शायद इसीलिए उसका नाम इस दर्शन से जुड़ गया । यह भी माना जाता है कि चार्वाक नाम भी उसका मौलिक नाम नहीं था । मेरे पास उपलब्ध शब्दकोश में इस नाम की व्याख्या इस प्रकार दी गयी है:

चारुः लोकसम्मतो वाको वाक्यं यस्य (सः चारुवाकः)

(संस्कृत-हिंदी शब्दकोश, वामन शिवराम आप्टे, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, 2006)

अर्थात् लोकलुभावन और आम जन को प्रिय लगने वाले वचन कहता हो, प्रचारित करता हो, वह चारुवाक । कालांतर में यही बदलकर चार्वाक हो गया । जो सीधे तौर में समझ आये और सुविधाजनक लगे जीवन का वैसा रास्ता जो दिखाये वह चार्वाक ।[6]

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 2, Issue 12, December 2013

चार्वाक दर्शन नास्तिकवादी एवं अनीश्वरवादी है । इस दर्शन के अनुसार जो भी इंद्रियगम्य है, जिसके अस्तित्व का ज्ञान देख-सुनकर अथवा अन्य प्रकार से किया जा सकता है, वही वास्तविक है । जिस ज्ञान को चिंतन-मनन से मिलने की बात कही जाती है, वह भ्रामक है, मिथ्या है, महज अनुमान पर टिका है । आत्मा-परमात्मा जैसी कोई चीज होती ही नहीं है, अतः पाप-पुण्य नर्क-स्वर्ग का कोई अर्थ ही नहीं है ।

चार्वाक सिद्धांत चार तत्वों, 'पृथ्वी', 'जल', 'अग्नि', एवं 'वायु' को मान्यता देता है । समस्त जीव-निर्जीव तंत्र/पदार्थ इन्हीं के संयोग से बने हैं । स्थूल वस्तुओं/जीवों की रचना में 'आकाश' का भी कोई योगदान नहीं रहता है, अतः उसे यह पांचवें तत्व के रूप में नहीं स्वीकारता है । (ध्यान रहे कि कई दर्शन पांच महाभूतों को भौतिक सृष्टि का आधार मानते हैं: 'क्षितिजलपावकगगनसमीरा') । चार्वाक के अनुसार मनुष्यों एवं अन्य जीवों की चेतना इन्हीं मौलिक तत्वों के परस्पर मेल से उत्पन्न होती है । जब शरीर अपने अवयवों में बिखर जाता है तो उसके साथ यह चेतना भी लुप्त हो जाती है । इस विचार को स्पष्ट करने के लिए चार्वाक का अधोलिखित कथन विचारणीय है:

जडभूतविकारेषु चैतन्यं यत्तु दृश्यते ।

ताम्बूलपूगचूर्णानां योगाद् राग इवोत्थितम् ।।

(स्रोत: भारतीय दर्शनशास्त्र का इतिहास, लेखक: हरिदत्त शास्त्री, साहित्य भंडार, मेरठ, 1966, पृष्ठ 63)

अर्थात् जिस प्रकार पान के पत्ते तथा सुपाड़ी के चूर्ण के संयोग से लाल रंग होंठों पर छा जाता है, उसी प्रकार इन चेतनाशून्य घटक तत्वों के परस्पर संयोग से चेतना की उत्पत्ति होती है । यानी चेतना आत्मा या तत्तुल्य किसी अन्य अभौतिक सत्ता की विद्यमानता से नहीं आती है । विभिन्न पदार्थों के सेवन से चेतना की तीव्रता कम-ज्यादा हो जाती है, जिससे स्पष्ट है कि ये ही पदार्थ चेतना के कारण हैं ।

चार्वाक दर्शन वस्तुतः आज का विज्ञानपोषित भौतिकवाद है, जिसकी मान्यता है कि समस्त सृष्टि भौतिक पदार्थ और उससे अनन्य रूप से संबद्ध ऊर्जा का ही कमाल है । पदार्थ से ही जीवधारियों की रचना होती है । उसमें किसी अभौतिक सत्ता की कोई भूमिका नहीं है । विशुद्ध चेतनाहीन पदार्थ से ही जटिल एवं जटिलतर जीवों की रचना हुई है । जीव-रचना की जटिलता के ही साथ चेतना का भी उदय हुआ है । ऐसी संरचना के निरंतर विकास के फलस्वरूप मानव जैसा चेतन और बुद्धियुक्त जीव का जन्म हुआ है । वैज्ञानिकों का एक वर्ग इस विचारधारा का पक्षधर है कि चेतना का मूल कारण भौतिकी के ही प्राकृतिक नियमों में छिपा है । चेतना का उदय कब और कैसे होता है यह अवश्य इन विज्ञानियों के लिए अभी अबूझ पहेली है ।

आधुनिक विज्ञान पदार्थमूलक है । अध्यात्म से उसका कोई संबंध नहीं है । आज के विज्ञानमूलक भौतिक दर्शन, जिसमें सब कुछ पदार्थगत है, को चार्वाक दर्शन का परिष्कृत दर्शन कह सकते हैं, क्योंकि यह भौतिक तंत्रों/घटनाओं की तर्कसम्मत व्याख्या कर सकता है । अवश्य ही यह चार्वाक के चार तत्वों पर नहीं टिका है । सभी वैज्ञानिक चार्वाक सिद्धांत को यथावत् नहीं मानते हैं । उनमें कई ईश्वर तथा जीवात्मा जैसी चीजों को मानते हैं ।

'लोकायत' के मतावलंबियों को अक्सर 'चार्वाक' भी कहते हैं । चार्वाकों को दो श्रेणियों में बांटा जाता है: (1) धूर्त, एवं (2) सुशिक्षित । 'यह शरीर जब तक है, तभी तक सब कुछ है, उसके बाद कुछ नहीं रहता' के सिद्धांत के कारण लोकायत में पाप-पुण्य, नैतिकता आदि जैसी बातों का कोई ठोस आधार न होते हुए भी 'सुशिक्षित' चार्वाक सुव्यवस्थित मानव समाज की रचना के पक्षधर होते हैं ।

दूसरी तरफ 'धूर्त' चार्वाकों के लिए 'खाओ-पिओ मौज करो, और उसके लिए सब कुछ जायज है' की नीति पर चलते हैं । उनके लिए सुखप्राप्ति एकमेव जीवनोद्येश्य रहता है । कोई भी कर्म उनके लिए गर्हित, त्याज्य या अवांछित नहीं होता है । और ऐसे जनों की इस धरती पर कोई कमी नहीं होती है ।[7]

मेरा अपना आकलन है कि इस दुनिया में 90 प्रतिशत से अधिक लोग चार्वाक सिद्धांत के अनुरूप ही जीवन जीते हैं । यद्यपि वे किसी न किसी आध्यात्मिक मत में आस्था की बात करते हैं, किंतु उनकी धारणा गंभीरता से विचारी हुई नहीं होती, महज सतही होती है, एक प्रकार का 'तोतारटंत', एक प्रकार की भेड़चाल में अपनाई गयी नीति । चूंकि दुनिया में लोग ऐसा या वैसा मानते हैं, अतः हम भी मानते हैं वाली बात उन पर लागू होती है । अन्यथा तथ्य यह है कि प्रायः हर व्यक्ति इसी धरती के सुखों को बटोरने में लगा हुआ है । अनाप-शनाप धन-संपदा अर्जित करना, और भौतिक सुखों का आनंद पाना यही लगभग सभी का लक्ष्य रह गया है । मानव समाज में जो भी छोटे-बड़े अपराध देखने को मिलते हैं वे अपने लिए सब कुछ बटोरने की नियत से किये जाते हैं । हमारे कृत्य से किसी और को क्या कष्ट होगा इसका कोई अर्थ नहीं है । मेरा काम जैसे भी निकले वही तरीका जायज है की नीति सर्वत्र है । इस जीवन से परे भी क्या कुछ है इस प्रश्न को हर कोई टाल देना पसंद करता है । और कर्मकांडों के तौर पर कहीं कुछ होता है तो वह भी अपने, अपने परिवार, अपने लोगों के सुखमय जीवन एवं सुरक्षा की कामना से किया जाता है । यहां तक कि आधुनिक धर्मगुरु भी अपने सुख के लिए चेलों का संगठन तैयार करते हैं; वे अपने परलोक के लिए उतना चिंतित नहीं रहते जितना दूसरों के परलोक के लिए (धोखा देना) । वस्तुतः इस समय सर्वत्र चार्वाक सिद्धांत की ही मान्यता है; आप मानें या न मानें । – योगेन्द्र जोशी

'आत्मानं रथिनं विद्धि ...': कठोपनिषद् में आत्मा एवं शरीर के संबंध की व्याख्या

पहले की एक पोस्ट (७ अक्टूबर २००९) में इस बात का उल्लेख किया गया है कि कठोपनिषद् में वाजश्रवापुत्र ऋषिकुमार नचिकेता और यम देवता के बीच प्रश्नोत्तरों की कथा का वर्णन है । बालक नचिकेता की शंकाओं का समाधान करते हुए यमराज उसे उपमाओं के माध्यम से सांसारिक भोगों में लिप्त आत्मा, अर्थात् जीवात्मा, और उसके शरीर के मध्य का संबंध स्पष्ट करते हैं । संबंधित आख्यान में यम देवता के निम्नांकित श्लोकनिबद्ध दो वचन मुझे रोचक लगे:

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु ।

बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च ।।

(कठोपनिषद्, अध्याय १, वल्ली ३, मंत्र ३)

(आत्मानम् रथिनम् विद्धि, शरीरम् तु एव रथम्, बुद्धिम् तु सारथिम् विद्धि, मनः च एव प्रग्रहम् ।)

इस जीवात्मा को तुम रथी, रथ का स्वामी, समझो, शरीर को उसका रथ, बुद्धि को सारथी, रथ हांकने वाला, और मन को लगाम समझो । (लगाम – इंद्रियों पर नियंत्रण हेतु, अगले मंत्र में उल्लेख ।)

इंद्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान् ।

आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः ।।

(कठोपनिषद्, अध्याय १, वल्ली ३, मंत्र ४)

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 2, Issue 12, December 2013

(मनीषिणः इंद्रियाणि हयान् आहुः, विषयान् तेषु गोचरान्, आत्मा-इन्द्रिय-मनस्-युक्तम् भोक्ता इति आहुः ।)

मनीषियों, विवेकी पुरुषों, ने इंद्रियों को इस शरीर-रथ को खींचने वाले घोड़े कहा है, जिनके लिए इंद्रिय-विषय विचरण के मार्ग हैं, इंद्रियों तथा मन से युक्त इस आत्मा को उन्होंने शरीररूपी रथ का भोग करने वाला बताया है ।

प्राचीन भारतीय विचारकों का चिंतन प्रमुखतया आध्यात्मिक प्रकृति का रहा है । ऐहिक सुखों के आकर्षण का ज्ञान उन्हें भी रहा ही होगा । किंतु उनके प्रयास रहे थे कि वे उस आकर्षण पर विजय पायें । उनकी जीवन-पद्धति आधुनिक काल की पद्धति के विपरीत रही । स्वाभाविक भौतिक आकर्षण से लोग स्वयं को मुक्त करने का प्रयास करें ऐसा वे सोचते रहे होंगे और उपनिषद् आदि ग्रंथ उनकी इसी सोच को प्रदर्शित करते हैं ।

उनके दर्शन के अनुसार अमरणशील आत्मा शरीर के द्वारा इस भौतिक संसार से जुड़ी रहती है और यहां के सुख-दुःखों का अनुभव मन के द्वारा करती हैं । मन का संबंध बाह्य जगत् से इंद्रियों के माध्यम से होता है । दर्शन शास्त्र में दस इंद्रियों की व्याख्या की जाती हैः पांच ज्ञानेंद्रियां (आंख, कान, नाक, जीभ तथा त्वचा) और पांच कर्मेंद्रियां (हाथ, पांव, मुख, मलद्वार तथा उपस्थ यानी जननेंद्रिय, पुरुषों में लिंग एवं स्त्रियों में योनि) ज्ञानेंद्रियों के माध्यम से मिलने वाले संवेदन-संकेत को मन अपने प्रकार से व्याख्या करता है, सुख या दुःख के तौर पर । इंद्रिय-संवेदना क्रमशः देखने, सुनने, सूंघने, चखने तथा स्पर्शानुभूति से संबंधित रहती हैं । किन विषयों में इंद्रियां विचरेंगी और कितना तत्संबंधित संवेदनाओं को बटोरेंगी यह मन के उन पर नियंत्रण पर रहता है । इंद्रिय-विषयों की उपलब्धता होने पर भी मन उनके प्रति उदासीन हो सकता है ऐसा मत मनीषियों का सदैव से रहा है । उक्त मंत्रों के अनुसार क्या कर्तव्य है और क्या नहीं का निर्धारण बुद्धि करती है और मन तदनुसार इंद्रियों पर नियंत्रण रखता है । इन मंत्रों का सार यह है: भौतिक भोग्य विषयों रूपी मार्गों में विचरण करने वाले इंद्रिय रूपी घोड़ों पर मन रूपी लगाम के द्वारा बुद्धि रूपी सारथी नियंत्रण रखता है । [8]

परिणाम

पवित्र ऋग्वेद दस पुस्तकों (मंडलों) में आयोजित लगभग 10,600 मंत्र, 1,028 सूक्तों का संग्रह है।

ऋषिमना य ऋषिकृत्स्वर्षाः सहस्त्रणीथः पदवीः कवीनाम्।
तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनु राजति ष्टुप्।।18।।

ऋषिमना य ऋषिकृत् स्वर्षाः सहस्त्राणीथः पदवीः कवीनाम्। तृतीयम् धाम महिषः सिषा सन्त् सोमः विराजमानु राजति स्टुप्।।

वेद बोलने वाला ब्रह्म कह रहा है कि (य) जो पूर्ण परमात्मा विलक्षण बच्चे के रूप में आकर (कवीनाम्) प्रसिद्ध कवियों की (पदवीः) उपाधि प्राप्त करके अर्थात् एक संत या ऋषि की भूमिका करता है उस (ऋषिकृत्) संत रूप में प्रकट हुए प्रभु द्वारा रची (सहस्त्राणीथः) हजारों वाणी (ऋषिमना) संत स्वभाव वाले व्यक्तियों अर्थात् भक्तों के लिए (स्वर्षाः) स्वर्ग तुल्य आनन्द दायक होती हैं। (सोम) वह अमर पुरुष अर्थात् सतपुरुष (तृतीया) तीसरे (धाम) मुक्तिलोक अर्थात् सत्यलोक की (महिषः) सुदृढ़ पृथ्वी को (सिषा) स्थापित करके (अनु) पश्चात् (सन्त्) मानव सदृश संत रूप में होता हुआ (स्टुप) गुबंद अर्थात् गुम्बज में उच्चे टिले रूपी सिंहासन पर (विराजमनुराजति) उज्वल स्थूल आकार में अर्थात् मानव सदृश तेजोमय शरीर में विराजमान है।

परमेश्वर की सर्व प्राणियों को चाह है, वह कविर अर्थात कबीर परमेश्वर पूर्ण विद्वान है। उसका शरीर बिना नाड़ी (अस्नाविरम) का है, (शुक्रम अकायम) वीर्य से बनी पांच तत्व से बनी भौतिक काया रहित है। वह सर्व का मालिक सर्वोपरि सत्यलोक में

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 2, Issue 12, December 2013

विराजमान है। उस परमेश्वर का तेजपुंज का (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित शरीर है। जो शब्द रूप अर्थात अविनाशी है। वही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) है जो सर्व ब्रह्मण्डों की रचना करने वाला (व्यदधाता) सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार (स्वयम्भूः) स्वयं प्रकट होने वाला (यथा तथ्यः अर्थान्) वास्तव में (शाश्वतिभः) अविनाशी है जिसके विषय में वेद वाणी द्वारा भी जाना जाता है कि परमात्मा साकार है तथा उसका नाम कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है(गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी प्रमाण है।) भावार्थ है कि पूर्ण ब्रह्म का शरीर का नाम कबीर (कविर देव) है। उस परमेश्वर का शरीर नूर तत्व से बना है।परमेश्वर मानव रूप धारण करके अर्थात् गुरु रूप में प्रकट होकर (मनीषिभिः) हृदय से चाहने वाले श्रद्धा से भक्ति करने वाले भक्तात्मा को (त्रि) तीन (नाम) मन्त्र अर्थात् नाम उपदेश देकर (पवते) पवित्र करके (जनयन्) जन्म व (क्षरनः) मृत्यु से (न) रहित करता है तथा (तस्य) उसके (वायुम्) प्राण अर्थात् जीवन-स्वांसों को जो संस्कारवश गिनती के डाले हुए होते हैं को (कोशान्) अपने भण्डार से (सख्याय) मित्रता के आधार से (परि) पूर्ण रूप से (वर्धयन्) बढ़ाता है। (यतः) जिस कारण से (इन्द्रस्य) परमेश्वर के (मधु) वास्तविक आनन्द को (असिष्यदत्) अपने आशीर्वाद प्रसाद से प्राप्त करवाता है।[9]

निष्कर्ष

पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने का ॐ (1) तत् (2) सत् (3) यह मन्त्र जाप स्मरण करने का निर्देश है। इस नाम को तत्वदर्शी संत से प्राप्त करो। तत्वदर्शी संत के विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है तथा गीता अध्याय नं. 15 श्लोक नं. 1 व 4 में तत्वदर्शी सन्त की पहचान बताई तथा कहा है कि तत्वदर्शी सन्त से तत्वज्ञान जानकर उसके पश्चात् उस परमपद परमेश्वर की खोज करनी चाहिए। जहां जाने के पश्चात् साधक लौट कर संसार में नहीं आते अर्थात् पूर्ण मुक्त हो जाते हैं। उसी पूर्ण परमात्मा से संसार की रचना हुई है।

- पवित्र चारों वेद भगवान का संविधान हैं।
- वेदों में पूर्ण परमेश्वर के बारे में पूरी जानकारी है, लेकिन पूर्ण परमेश्वर को प्राप्त करने के लिए पूजा की सही विधि क्या है, या हम कैसे पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं इसका उल्लेख पवित्र वेदों में नहीं किया गया है।

यदि आप जानना चाहते हैं कि पूर्ण परमात्मा तथा पूर्ण मोक्ष कैसे प्राप्त कर सकते हैं, तो आपको पूर्ण संत की शरण लेनी होगी। इस समय पूरे विश्व पूर्ण संत जगतगुरु तत्वदर्शी संत रामपाल जी महाराज जी ही हैं। उनसे नाम उपदेश प्राप्त कर अपना कल्याण कराएं।[8,9]

संदर्भ

1) ऋग्वेद संहिता (संस्कृत विकिस्रोत)
2) ऋग्वेद: English translation
3) ऋग्वेद: मूलग्रन्थ: ITRANS encoding
4) Index of Vedic Literature (महर्षि वेद प्रतिष्ठान द्वारा हजारों ग्रन्थ, देवनागरी में उपलब्ध)
5) हड़प्पा साहित्य और वैदिक साहित्य (गूगल पुस्तक ; लेखक - भगवान सिंह)
6) A Complete Review of Vedic Literature And the Knowledge Within By Stephen Knapp
7) Vaidik Samhitas and Brahmins - a short introduction
8) "'The Old Vedic language had its origin outside the subcontinent. But not Sanskrit.'".
9) ↑ WD. "वैदिक धर्म क्या कहता है | Vedic religion". hindi.webdunia.com. मूल से 29 जुलाई 2000

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 2, Issue 12, December 2013